स्वपथगामी

साइकिल यात्रा

स्वपथगामियों की साइकिल यात्रा के बारे में सुनते ही पहले मेरे मन में कुछ सन्देहजनक सवाल उठे कि बिना पैसे के सात दिन की यात्रा कैसे हो सकती है? बिना पैसे खाना? सीखना–सिखाना? हम जहाँ जा रहे हैं, वहाँ के लोगों को जानते ही नहीं हैं, तो हमें खाना कौन खिलाएगा और सीखने के मौके कौन देगा?

मेरे लिए सबसे रोचक बात यह थी कि हमने किसी से कोई चीज 'मुफ़्त' में नहीं ली। हम सब विभिन्न प्रकार के हुनर जानते थे, जिससे हमें किसी पर ज्यादा निर्भर होने की जरूरत नहीं पड़ी। जब कभी किसी की साइकिल पंक्चर होती या कोई खराबी होती, तो हम खुद ही उसकी मरम्मत कर लेते। मैंने यहाँ पर बहुत सारे काम जिन्दगी में पहली बार किए। खेत में काम करना, गोबर उठाना, गाय–भैंसों को नहलाना।

मैं अकसर सुबह देर से उठती हूँ, लेकिन लालपुरा गाँव में मुझे जल्दी ही उठना पड़ा और मुझे जो काम मिला, वो था गायों का गोबर इकट्ठा करना और तबेले की सफाई करना। पहले तो मुझे संकोच हुआ कि हाथों से गोबर की बदबू कैसे जाएगी! लेकिन कुछ और साथियों को देखकर मैंने भी गोबर उठाना शुरू किया। अधधुले गोबर के हाथों से मैंने खाना खाया। उस काम के आनन्द और उसमें अपने श्रम की खुशबू से मुझे यह भी पता ही नहीं चला कि मेरे हाथ गोबर से सने हैं। मैंने यहाँ के लोगों से सीखा कि गोबर और मिट्टी जैसी चीजें गन्दी नहीं होती, बल्कि इनसे हमारा भोजन तैयार होता है। यह बात भी रोचक मालूम हुई कि गोबर से हमारे शरीर की सफाई होती है और कई बीमारियों से बचाव भी होता है।

– लहरू झवेरी, उदयपुर
<lhr_laher@yahoo.com>

जब मुझे राजस्थान के गाँवों की साइकिल यात्रा का मौका मिला, मैं उत्साह से अपनी साइकिल पर सवार हुआ। हम कुल 14 साथी मेवाड़ के विभिन्न गाँवों से होते हुए गुजरे। अलग–अलग गाँवों में ठहरकर नाचना, गाना, दीवारों पर पेंटिंग करना, खेतों में काम करना, नदियों में नहाना, लोगों से मिलना, उनके घर के काम में मदद करना, खुले में खाना बनाना और बहुत सारी बातें करना। हम पैसों का उपयोग नहीं कर रहे थे, इसलिए हमें कई अनिश्चित परिस्थितियों से गुजरना पड़ा। जैसे कि हमने खाने के बदले श्रम करने के लिए काम ढूँढा। लोगों से खाना माँगकर खाया। कभी हमें बना–बनाया खाना मिला, तो कभी केवल आटा–दाल और शायद प्याज, मिर्ची और लहसुन! हमें जो भी मिलता, हम सन्तुष्ट थे।

खेत में काम करते हुए और भैंसों के तबेलों की सफाई करते हुए मैंने सीखा कि कला, कविता, नाटक, फिल्म इन सबका मकसद क्या है? मैं सोच रहा था कि मैं किसको प्रभावित करने की कोशिश कर रहा हूँ? मैंने खासकर चीजों का असली मूल्य जाना या फिर असली चीजों का मूल्य जाना; खाने का मूल्य, कपड़ों का मूल्य, पेड़ों–फलों और बहते पानी का मूल्य। एक पेड़ को फल उगाने के लिए कितने पैसे देने पड़ते हैं? कितना बेतुका प्रश्न है यह! है ना?

– संजय महर्षि, दिल्ली <sanjay.maharishi@gmail.com>

साइकिल यात्रा के एक पड़ाव में हम लालपुरा गाँव में ठहरे। यहाँ मैं एक लुहार के घर रुका था। उनका पूरा परिवार ही लुहारी का काम करता है। हम सुबह उठते ही उनके साथ उनके वर्कशॉप में गए। मैंने देखा कि वे लोहे के किसी भी टुकड़े से कुछ भी बना देते हैं। मैं इन अंकल के साथ दो घंटे के लिए था। हमने साथ मिलकर एक मोटे सरिये से दो चाकू बनाए।

यह काम इतनी मेहनत और ध्यान वाला है कि कहीं मन ही नहीं भटकता। कई बार तो मैं काम में इतना मग्न हो गया कि यह भी भूल गया था कि हम वर्कशॉप में बैठकर चाकू बना रहे हैं। इस काम में पूरा ध्यान आग, लोहे और हथौड़े पर होता है। थोड़ा सा ध्यान हटने पर लोहा गलत मुड़ सकता है। मुझे आग के पास बैठकर पहले तो बहुत गर्मी लगी, पर धीरे–धीरे इसकी आदत पड़ गई। इस काम में इतनी मेहनत है कि यह काम मुझे मेरी यात्रा के सभी कामों में ज्यादा पसन्द आया।

एक और चीज, जो शहरों में देखने को नहीं मिलती है, वो है कि वहाँ जो भी ग्राहक दुकान में आ रहे थे, पहले उनसे बातचीत होती थी कि वो कैसे हैं? आजकल क्या चल रहा है? गाँव और आसपास की ताजा ख़बर क्या है? इस तरह बिना पैसे और बिना टीवी, अखबार के पूरे गाँव को पता चल जाता है कि गाँव में क्या–क्या हो रहा है। लोग साथ बैठकर चिलम/बीड़ी पीते हैं और अपनी जिन्दगी से जुड़ी बातें करते हैं।

– अनीश सिंह, दिल्ली <anish.manzil@rediffmail.com>

शिवाम्बु शक्ति

बचपन में जब कभी शरीर में कहीं चोट लग जाती थी, तो घर वाले कहते थे कि इस पर पेशाब कर लो। उस समय बेण्ड–एड जैसे प्रोडक्ट्स मार्केट में नहीं थे और न ही अस्पतालों पर निर्भरता थी। स्वमूत्र से चोट के घाव ठीक हो जाया करते थे। लेकिन तब स्वमूत्र–चिकित्सा के बारे में खास समझ नहीं थी।

करीब 5 साल पहले जब मैं बम्बई आया, तो मेरी पत्नी 'स्वमूत्र चिकित्सा' की एक किताब खरीद लाई। उसको पढ़ने के बाद मुझे लगा कि मुझे भी इसका प्रयोग करके देखना चाहिए। उन दिनों मेरे बाएँ कंधे में बहुत दर्द रहता था और उसके लिए मैं दर्द–निवारक गोलियॉं भी खाया करता था। पहली बार मैंने स्वमूत्र का सेवन किया, तो बरसों से बनी मानसिकता बाधा बनी। उसका स्वाद और गन्ध अजीब सा लगा। दूसरे दिन मैंने इसे थोड़ी अधिक मात्रा में लिया, तो पेट में जलन हुई। मुझे डर लगा कि कहीं इन्फेक्शन नहीं हो गया हो। फिर भी मैंने सोचा कि इसमें ऐसी कोई वि÷ाक्त चीज तो है नहीं। चार–पॉंच दिन बाद मुझे महसूस हुआ कि मेरे कंधे का दर्द बहुत कम हो गया था। पहले ऑफिस की सीढ़ियॉं चढ़ने–उतरने में भी मुझे बहुत थकान हो जाया करती थी, लेकिन अचानक वो भी कम होने लगी।

उसके बाद मैंने उस किताब को ग़ौर से पढ़ा। मैंने पाया कि पुराना मूत्र त्वचा के लिए बहुत फायदेमन्द होता है। मेरे सिर में फंगस का एक पेच हुआ करता था, जो बड़ी अजीब सी दशा में था। मैंने पुराने मूत्र का इस्तेमाल इस पर किया, जिससे मुझे बहुत फायदा हुआ। फिर मैंने इसका उपयोग अपने चेहरे पर भी किया, जिससे त्वचा में निखार सा आने लगा। मैंने ऑफ्टर शेव क्रीम के बदले में स्वमूत्र का उपयोग करना शुरू कर दिया। तब से मैंने चेहरे पर किसी प्रकार की क्रीम का इस्तेमाल नहीं किया।

मेरा बेटा आदित्य उस समय 3 साल का था, एलर्जी के कारण उसकी त्वचा में दाने–दाने से निकल आए थे। बम्बई के एक डॉक्टर ने बताया कि यह एक्जिमा है, जो इस उम्र में बच्चों को अकसर हो जाता है। इसलिए यह 5–6 साल की उम्र तक रहेगा और इस पर कोई दवाई भी असर नहीं करेगी। उसके बाद मैंने एक और किताब पढ़ी, जो हॉलैण्ड के क्रॉनर नामक व्यक्ति ने लिखी थी। इसमें उसने लिखा है कि मूत्र का उपयोग बाह्य अंगों पर भी बहुत असरदार होता है। मैंने बाथ–टब में आदित्य का शिवाम्बु मिला दिया और उससे नहलाना शुरू किया। 15–20 दिन में उसके तमाम दाग मिट गए और वह बिल्कुल ठीक हो गया। फिर तो जब भी आदित्य बीमार होता, मैं उसका शिवाम्बु किसी ज्यूस वगैरह में मिलाकर उसे पिला देता। पिछले चार–पॉंच सालों में हम दोनों ने कोई एंटीबायोटिक नहीं ली हैं।

हालॉंकि बम्बई में रहते हुए मेरी जीवन शैली इतनी प्राकृतिक नहीं है, फिर भी शिवाम्बु चिकित्सा ने मुझे डॉक्टरों और अस्पतालों से बचाए रखा है। मैंने अपने ऑफिस में भी कई लोगों को इसके बारे में बताया है। कुछ लोग इसका मजाक उड़ा देते हैं, तो कुछ लोग समझने के बाद भी इसका प्रयोग करने में हिचकिचाते हैं। फिर भी कुछ मित्र इसका उपयोग कर रहे हैं।

स्वमूत्र चिकित्सा प्राकृतिक चिकित्सा का ही एक हिस्सा है, क्योंकि इसके निर्माण में ना तो कोई एनजीओ शामिल है और ना ही कोई कम्पनी। आजकल मैंने सुना है कि कुछ कम्पनियॉं गोमूत्र का अर्क निकालकर बेचती हैं, जो कैंसर और रक्त प्रवाह में रुकावट सम्बन्धी बीमारियों में भी बहुत असरकारी साबित हो रहा है। स्वमूत्र चिकित्सा अपने आप में सम्पूर्ण और कारगर है। आजकल इस चिकित्सा के बारे में कुछ वेबसाइट्स भी उपलब्ध है। हमारे यहॉं इसका प्रचार–प्रसार मौखिक रूप से ही होता रहा है। अंग्रेजी शिक्षा के चलन के बाद ऐसी पारम्परिक चिकित्साएँ लगभग खत्म सी होने लगी थी। आजकल फिर से इसका प्रचार होने लगा है।

शिवाम्बु का बेहतरीन उपयोग होता है कि सुबह उठते ही पहली बार उत्सर्जित मूत्र का मध्य भाग (शुरूआत और अन्त का हिस्सा छोड़कर) का सेवन करें। सिर्फ यह ध्यान रखें कि इसके सेवन से आधा–पौन घण्टे पहले और बाद तक कुछ नहीं खाएँ। हालॉंकि इससे किसी तरह का कोई रिएक्शन नहीं होता, लेकिन खाना नहीं खाने से यह अधिक फायदेमन्द होता है। स्वमूत्र सेवन से शरीर में डिटोक्सिकेशन की प्रक्रिया शुरू होती है, जिससे शरीर में फोड़े–फुन्सी निकल सकते हैं। इसलिए शुरूआती दिनों में थोड़ी तकलीफ़ हो सकती है, लेकिन इससे घबराना नहीं चाहिए। जैसे शुरूआत में मेरे पेट में जलन होने लगी थी, लेकिन उससे मेरा कब्ज साफ हो गया।

शिवाम्बु का एक और अच्छा उपयोग है श्वसन सम्बन्धी समस्याओं में। इसके लिए नेती क्रिया करना चाहिए। यानी नाक से शिवाम्बु को पीना या नाक के एक छिद्र से लेकर दूसरे छिद्र से बाहर निकालना। अगर दॉंतों में दर्द या मुॅंह में छाले हों, तो इससे कुल्ले करना चाहिए। बम्बई में प्रदूषण के कारण मुझे कभी–कभी ऑंखों में इन्फेक्शन हो जाता है, तो मैं आई–ड्रॉपर से कुछ बूॅंदें डालकर ऑंखें साफ करता हूॅं, इससे बहुत आराम मिलता है।

शिवाम्बु हमारे शरीर द्वारा तैयार किया गया उपचार है, जिसे किसी लेब में तैयार नहीं किया जा सकता है। यह कोई वेस्ट चीज नहीं है, बल्कि हमारे शरीर में एकत्रित पानी का अंश है, जो किडनी से फिल्टर होकर आता है। इसमें हार्मोन्स, विटामिन, एंटीबायोटिक्स, मिनरल्स आदि होते हैं।

– सुदर्शन जुयाल <sudarshan.juyal@gmail.com>
ए–3, 512 धीरज वैली, गोरेगॉव (पूर्व), मुम्बई – 400063

कच्चे पकवान

मुम्बई में स्थित द हेल्थ अवेअरनेस सेंटर, खान–पान से स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के प्रयोगों की जगह हैं। 'अपना स्वास्थ्य, अपने हाथ' के मकसद से 1989 में इसकी शुरूआत हुई। पौष्टिक भोजन को लेकर यहाँ अलग–अलग कार्यशालाएँ, सेमिनार एवं परामर्श सेवाएँ भी होती हैं। साथ ही मुम्बई में लगभग 200 लोगों के लिए टिफिन–सर्विस भी चलाते हैं। दो साथी यहाँ रहकर सीखने के अनुभव प्रस्तुत कर रहे हैं। अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :– विजया वैंकट, हेल्थ अवेअरनेस सेंटर, स्त्रीहितवर्धिनी, लोकमान्य नगर, के. गाडगील मार्ग, मुम्बई – 25 <health_awareness_centre@hotmail.com>

जब मैं छोटा था, तो मेरे पापा का एक रेस्टोरेंट था। उस समय मैं भी पापा के साथ जाया करता था। मेरी खाना बनाने में रुचि होने लगी। लेकिन स्कूल जाने के कारण मेरा पापा के काम में हाथ बँटाना छूट गया। पिछले दिनों हेल्थ अवेअरनेस सेंटर के बारे में सुनकर मैं अचम्भित हुआ कि यहाँ पर किसी भी भोजन में तेल, दूध, दही, घी, शक्कर और गेहूँ का इस्तेमाल नहीं किया जाता! मेरे मन में सवाल था कि आखिर बिना इन चीजों के पौष्टिक भोजन कैसे बनाया जा सकता है?

मैंने यहाँ पर मणि भाई और अन्य लोगों से पूछा कि वे तेल–घी का इस्तेमाल क्यों नहीं करते, तो उन्होंने बताया कि जिन चीजों को हम पानी में धोकर इस्तेमाल नहीं कर सकते, वो कैसे साफ हो सकती है! दूसरा यह कि तेल और घी में बहुत चिकनाहट होती है और इनसे हमारे शरीर पर ख़राब असर होता है, जैसे – मोटापा बढ़ना। ...और फिर धीरे–धीरे कई बीमारियाँ होनी शुरू हो जाती है।

मैंने यहाँ रहकर यह जाना और महसूस किया कि जो पैकेटबन्द खाने की चीजें (बिस्किट, ब्रेड, नमकीन...) हम इस्तेमाल करते हैं, ये हमारे लिए बहुत हानिकारक है। खाने की चीजें दो–तीन दिन से ज्यादा सुरक्षित नहीं रखी जा सकती। फिर डिब्बाबन्द खाने को महीनों तक सुरक्षित रखने के लिए कितने केमिकल इस्तेमाल किए जाते होंगे। मैंने यहाँ बिना तेल, घी और शक्कर के बहुत सारे स्वादिष्ट एवं पौष्टिक व्यंजन बनाने सीखे। मेरी कोशिश है कि अब हमारे घर में पैकेटबन्द चीजें नहीं आएँ और कम से कम तेल–घी का इस्तेमाल हो।

पिछले दिनों तपोवन आश्रम (उदयपुर) में 'कलात्मक जीवन उत्सव' में मैंने तीन दिन तक 25–30 लोगों का खाना बनाया। यह मेरे लिए पहला मौका था, जब मैंने इतने लोगों के लिए पौष्टिक भोजन बनाने की जिम्मेदारी ली। अन्नानास खीर (बिना दूध के) जैसे कुछ व्यंजन तो मैंने यहाँ पहली बार बनाए। तपोवन आश्रम के श्री आर.सी. मेहता ने प्रभावित होकर हमें एक और कैम्प में खाना बनाने के लिए आमन्त्रित किया। इस कैम्प में हमने 40 लोगों के लिए खाना बनाया और सब लोगों से हमारे खान–पान के बारे में बातचीत की। जब लोगों ने इस तरह के भोजन को सराहा और खाना बनाने में शामिल हुए, तो मुझे अहसास हुआ कि खाना बनाने के काम में भी कैसे लोगों को जोड़ा जा सकता है और पूरी जीवनशैली पर संवाद किया जा सकता है। अब मेरी अपने स्वास्थ्य पर नई समझ बन रही है। अब मैं यह भी सोच रहा हूँ कि हम जितना सम्भव हो, ऑर्गेनिक चीजों का इस्तेमाल करें।

– मनोज प्रजापत <dhakkan59@yahoo.com>
c/o नीमचमाता स्कीम, पानी की टंकी के पास, देवाली, उदयपुर

मेरी बचपन से ही खाना बनाने में रुचि है। मेरे हाथ का खाना स्वादिट तो होता था, लेकिन स्वास्थ्य की दृष्टि से पौष्टिक नहीं होता था। क्योंकि मैं जो भी बनाता था, उसमें बेशुमार तेल और मसाले इस्तेमाल करता था।

जब मैं हेल्थ अवेअरनेस सेंटर में गया, तो मेरी पौष्टिक भोजन पर थोड़ी सोच विकसित हुई। दस दिन में मैंने वहाँ तकरीबन 25–30 प्रकार के व्यंजन बनाने सीखे। जैसे कि रगड़ा, पेटिस, स्टीम पालक समोसे, नारियल लडडू, व अलग–अलग तरह के सलाद और बहुत कुछ। मैंने वही चीजें उदयपुर में उपलब्ध स्थानीय चीजों के साथ बनाई हैं। जैसे – मूँगफली का दही–हामो। हामो मेवाड़ का एक पौष्टिक अनाज है, जिसे आजकल लोग भूल–से गए हैं। इसी हामो के साथ मैंने कुछ नए व्यंजन बनाए हैं।

यहाँ मैंने सीखा कि हमारे स्वास्थ्य के लिए दूध–घी जैसी चीजों की कोई जरूरत नहीं है। दूध और सूखे अन्न को भी पचाना शरीर के लिए काफी मुश्किल होता है। मैंने जो चीजें यहाँ सीखी वे बिना पकी हुई या भाप से पकाई गई थी। कच्चा खाना या भाप से पकाया गया खाना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है और जल्दी पचता है। खाने को पकाने से उसके पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं। मैंने यह भी जाना कि हमारे शरीर के पोषण के लिए ज्यादा अनाज की आवश्यकता नहीं है, बल्कि शरीर की ज्यादातर आवश्यकताएँ फल और सब्जियाँ पूरा कर देती हैं।

मैं अभी खुद के खान–पान में परिवर्तन कर रहा हूँ। जैसे तेल, दूध और शक्कर का इस्तेमाल मैंने बहुत कम कर दिया है। मैं अपने स्वास्थ्य के बारे में बहुत सोच रहा हूँ। साथ ही मेरे मन में कुछ नए सवाल उठ रहे हैं कि हमारे शरीर की ज्यादातर आवश्यकताएँ फल और सब्जियाँ पूरा तो कर देती हैं, लेकिन आम आदमी इतने फल कैसे खरीद सकता है और इतने प्रकार के फल हर जगह कैसे उपलब्ध हो सकते हैं?

– सन्नी गन्धर्व <sunnydewali@yahoo.co.in>
89, विद्याभवन के पास, देवाली, उदयपुर (राजस्थान)

पल-पल चप्पल

कुछ समय से कबाड़ से अपने इस्तेमाल की चीजें खुद बनाने में मेरी दिलचस्पी बढ़ रही है। एक दिन मैंने पुराने टायर की चप्पल बनाने का फैसला किया।

मैंने अपनी साइकिल उठाई और चप्पल बनाने के लिए अपना सफर शुरू किया। सबसे पहले मैं औजार की दुकान पर पहुँचा। वहाँ आए मोचियों ने औजार चुनने में मेरी मदद की। उनमें से एक भाई ने अपने कारखाने में आने के लिए आमन्त्रित किया।

संकरी गलियों में से हम एक हड्डी जोड़ने वाले पहलवान के दवाखाने के पास से गुजरते हुए रेगरों की कोठी में पहुँचे। एक घर के बरामदे में खजूर के पत्ते पड़े थे, जिनसे वे लोग शायद झाड़ू बनाते होंगे। थोड़ा आगे एक घर के चबूतरे पर आधे बने हुए जूतों की कई जोड़ियाँ सोल्यूशन लगाकर रखी हुई थी। मैं भी उनके साथ छोटे से कारखाने में बैठ गया। पहले तो उन्होंने मुझे रॉपी की धार लगानी सिखाई। उसके बाद मैं चप्पल के स्ट्रेप की कटिंग के काम में शामिल हो गया। उससे मुझे समझ आया कि कैंची पकड़ने और चमड़े को काटने के कई तरीके होते हैं।

जब मैं ट्रांसपोर्ट नगर में एक दुकान पर पुराना टायर खरीदने के लिए पहुँचा, तो पता चला कि वहाँ के दुकानदार इशाक भाई को भी टायर के के चप्पल बनाने का तजुर्बा है। इस काम में मेरी दिलचस्पी देखकर उन्होंने मुझे चप्पल बनाने के बारे में बताना शुरू किया। उन्होंने सबसे पहले एक गत्ते के टुकड़े से मेरे पैर का फर्मा बनाया। फिर ट्यूब से चप्पल के स्ट्रेप बनाए। गप–शप में मुझे पता चला कि इशाक भाई बिहार के रहने वाले हैं और दस साल की उम्र से यह काम कर रहे हैं। उन्होंने स्कूल न जाते हुए भी पढ़ना–लिखना सीख लिया था। उनको जब लिखने की जरूरत पड़ी, तो एक किताब ले आए और अपने आप सीख गए। वो कोल्हापुरी स्टाइल की चप्पल बना रहे थे। दूसरी तरफ कारीगर ट्रक के पुराने टायरों को मुश्तैदी से काट रहे थे।

एक स्कूल–कॉलेज में पढ़े लोगों की तरह मेरा भी मिलने वालों का दायरा बहुत सीमित रहा है। कभी भी जयपुर में हाथ से काम करने वालों से इस तरह साथ काम करते हुए दोस्ती बनाने का मौका नहीं मिला। मुझे पढ़े–लिखे लोगों और इशाक भाई की बातचीत में बहुत फर्क लगा। जब हमारी बात ऑर्गेनिक फार्मिंग के ईर्द–गिर्द आई, तो वे बोले – ''छोड़िए, आजकल कहाँ कोई देशी खेती करेगा!'' फिर तुरन्त

वे बोले कि उनकी माँ गाँव में ऐसे ही बीज फेंक देती थी और फसल हो जाती थी। जहाँ हमारी बात स्वास्थ्य पर पहुँची, तो वे बोले कि बचपन में उनके घर में कितनी ही बीमारियों में देशी इलाज चलता था, जिनके लिए आज हम अंग्रेजी दवाइयाँ लेते हैं। एक बात मुझे स्पष्ट हुई कि पढ़े–लिखे लोग विकास और विज्ञान के नाम पर थोपी हुई गुलामी को नहीं देख पाते। ''लेकिन इसका विकल्प क्या है?'' वाली मानसिकता से ग्रस्त रहते हैं। वे बदलाव के लिए सरकार का मुँह ताकते रहते हैं और अपनी जीवनशैली में बदलाव के प्रति उनमें बहुत प्रतिरोध है।

अगले दिन जब मैं रेगरों की कोठी पहुँचा, तो अपना ज्वैलरी बनाने का सामान और एक ब्रेसलेट भी बनाकर ले गया, जो कि मैंने उनमें से एक जने को दे दिया। उन लोगों को मैंने चैन की कड़ी बनाकर दिखाई, जो उन्होंने खट से समझ ली और वो चैन बनाने लग गए। चप्पल बनाने में मुझसे कुछ ठीक नहीं होता, तो भाई लोग एक बार मुझे बता देते और मेरी गलती खुद ही सुधार देते। कुछ समय काम करने के बाद मेरे काम में भी थोड़ी सफाई आने लगी। चाय के छोटे–छोटे गिलास आते रहे और हम काम करते रहे। मैंने उनको बताया कि मैं भी फिल्म बनाने का काम जानता हूँ और वे चाहें, तो उन्हें दिखा सकता हूँ कि फिल्म कैसे बनाते हैं।

मैंने चप्पल का काम दो दिन ही सीखा, लेकिन इतना जरूर हो गया कि अब तक कई दोस्तों की चप्पलों की मरम्मत कर चुका हूँ और चार जोड़ी चप्पल बना ली हैं। उनमें कुछ कमियाँ जरूर हैं, जो मुझे अभ्यास से और अपने गुरुजनों के साथ समय बिताकर आ जाएगा। इसके अलावा मैंने गाड़ियों के ट्यूब से बैग भी बनाए हैं।

मज़े की बात तो यह है कि अढ़ाई सौ रुपये के औजार पाकर मैं मोची का रोजगार कर सकता हूँ। जाने क्यों हमारे समाजसेवी मित्र दूसरे लोगों के रोजगार के अधिकार की लड़ाई की अगुवाई कर रहे हैं। इन रोजगारों में वे सरकार से न्यूनतम मजदूरी माँगते हैं। जिन कामों में जरा भी सृजनात्मकता की गुंजाइश नहीं है और ना ही वे लोग खुद ऐसे काम करना चाहेंगे, जिसकी सरकार से वे अन्य लोगों के लिए माँग कर रहे हैं।

इस सफर के दौरान मैंने पाया कि मेरे शहर में तो मोड़–मोड़ पर दिलचस्प हुनर सीखने के मौके हैं। मैं इन दो दिनों को अपने जयपुर में बिताए सबसे ज्यादा रोमांचक दिनों में से मानता हूँ। जब मैंने अपने सीखने के रास्ते पुराने शहर की गलियों में घूमकर खुद ढूँढ़े। उसमें मुझे इतना आनन्द मिला, जैसाकि मुझे सक्रान्त के दिन आता था, जब मैं सुबह 6 बजे से अँधेरा होने तक छत पर पतंग उड़ाता रहता था।

– शम्मी नन्दा<shammi_nanda@yahoo.com>
166, रामगली 3, राजापार्क, जयपुर – 4

कहानी समीक्षा :

अनमोल खजाना

'अनमोल खज़ाना' एक लोककथा है, जो पीढ़ियों से राजस्थान के कई हिस्सों में दादी या नानी द्वारा बच्चों को सुनाई जाती रही है। आजकल टेलीविजन और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के हावी होने से ऐसी लोककथाएँ लुप्त सी हो रही है। मैंने यह कहानी विजयदान देथा के कहानी संकलन 'उलझन' में पढ़ी है।

इस कहानी का मूल पात्र एक गड़रिया है, जो केवल प्रकृति के लिए है, उसके लिए सर्वोपरि सत्ता वही है। उसके लिए ना कोई राजा है, ना कोई रंक। कई लोग उसकी बातों को सुनकर हँस देते हैं, लेकिन उसे तो बिना किसी की परवाह किए वैसे ही जीना है।

इसके कथानक में एक राजा अपने सिपाहियों के साथ शिकार पर इतना दूर चला जाता है कि उसे आसपास न तो कहीं छाया मिलती है और न ही पानी। वही राजा उस गड़रिये से मिलता है, जो अकेला आसमान के नीचे धरती के बिछौने पर सोता है। झरनों से पानी, पेड़ों से कन्द–मूल–फल खाता है गाय–भेड़ों का दूध पीता है। राजा के प्यासे होने पर वह उसे पानी पिलाकर उस पर उपकार करता है। राजा जब बगसीस देने लगता है, तो वह इन्कार करते हुए कहता है कि ''जब मुझे कुछ जरूरत ही नहीं है, तो बगसीस मेरे किस काम की! मैंने अपने बाप से हिस्सा नहीं माँगा, तो दूसरों के सामने क्यों हाथ फैलाऊँ! मुझे किसी चीज की कोई जरूरत नहीं।''

मस्त गड़रिया अलगोजा बजाता है। उससे कोई पूछे कि उसने यह कब सीखा, कैसे सीखा, तो कहता है – झरनों को बहना किसने सिखाया? कोयल को गाना किसने सिखाया? उसकी ये बातें सुनकर राजा उसके आनन्द की थाह नहीं पा सका। उसे लगता है कि मैं इस मुल्क का राजा हूँ, फिर यह मुझसे ज्यादा सुखी कैसे रह सकता है? वह सोचता है कि धन की माया भी उस पर नहीं चली! राजा गड़रिये से आग्रह करता है कि तुम मेरे राज्य की बागडोर अपने हाथ में लेकर एक साल तक मेरा यह भार कम करो। राजा को आज तक अपने आसपास केवल चापलूस और बात में हामी भरने वाले ही मिले थे, उसके जैसा कोई नहीं मिला। सोचा, उस पर एक प्रयोग ही सही।

राजा उसके प्रकृति प्रेम को देखकर बहुत प्रभावित होता है। वह गड़रिये से पूछता है कि तुम्हारे जले चेहरे का कारण बताओ, तो वह कहता है कि दूसरे की भेड़ को बचाने के लिए वह शेर से भिड़ जाता है, गाय–बछड़े के लिए खुद को आग में झोंक देता है और दवाई इसलिए नहीं करवाता कि उसमें बकरे के खून में सनी लोई लगाई जाती है। कहता है, अपनी जान के लिए दूसरे की जान क्यों ली जाए? राजा उसे अपने राज्य को एक साल के लिए सौंप देता है। गड़रिया राज चलाने लगता है, जनता सुखी होती है। दरबारी उससे जलने लगते हैं और उस पर इल्जाम लगाते हैं कि वह एक अलग कोठरी में धन बचाकर रखता है। राजा दरबारियों की बातों में आकर उस पर शक़ करता है। शर्त के मुताबिक गड़रिया राजा का दरबार छोड़ देता है।

राजा सच्चाई जानकर ठगा सा रह जाता है। उसके खज़ाने में उसका अलगोजा, पानी की छागल, लाठी और उसका साफा होता है, जिसे वह अपनी पहचान, अपने अतीत और अस्तित्व को रोज निहारने के लिए कुछ समय निकालकर कोठरी में बिताता था। वही षड्यन्त्र का कारण बनता है। राजा उसे खो देता है। और फिर जिसे कुदरत के हरे पेड़, झरने, हवा, मानवता से प्रेम हो, उसे कोई ज्यादा समय कुदरत से दूर रखकर मोह–माया के जाल में कैसे फँसा सकता है। वह पढ़ा–लिखा नहीं है, इसीलिए ज्ञान और सच्चाई की बातें करता है।

'अनमोल खजाना' आज के इस उपभोगवादी परिवेश में हमें एक–दूसरे से और प्रकृति से जुड़ने के लिए प्रेरित करती है। हम कुछ दोस्तों ने मिलकर इस कहानी पर नाटक तैयार किया और उसका मंचन किया है। यह मुझे इसलिए अधिक प्रभावित करती है, क्योंकि मैं भी वही करता हूँ, जिसमें मेरी रुचि हो। इस कहानी से मुझे अपने भीतर के खजाने को पहचानने में मदद मिली है। मैंने अपनी अभिव्यक्ति के रूप में थिएटर को अपनाया। मुझे लगा कि मुझमें यह प्रतिभा है कि मैं इस माध्यम में सहज रूप से सृजन कर सकता हूँ। पिछले कुछ समयइस कहानी से मुझे अहसास होता है कि खजाना हम सबके अन्दर है, अगर हम अपनी क्षमताओं में विश्वास रखते हैं, तो उस खजाने की पहचान हम खुद कर सकते है।

– कुँअर नरेशपाल सिंह

<kunwar_npsingh@yahoo.com>

चित्रांगन, सुजानेश्वर महादेव मन्दिर के पास, कालिका माता रोड़, बाँसवाड़ा – 327001 (राजस्थान)

राजस्थान गोसेवा संघ

अवसर

— पन्नालाल पटेल, उदयपुर

<panna_lal_patel@yahoo.com>

पिछले तीन सालों से मैं सोच रहा था कि जयपुर जाकर गौसेवा संघ के काम को देखूँ–समझूँ। भगवान की दया से यह मौका मुझे इस साल नसीब हुआ। मेरे वहॉ जाने के लालच के पीछे कुछ कारण थे, उसमें से एक था कि गाय के मूत्र व गोबर से बनने वाली दवाइयाँ। दूसरा अभी तक मैंने बहुत सी देशी नस्लों की गायों के नाम तो सुने थे, लेकिन कभी देखी नहीं थी। तो यह मौका था जहॉ पर मैं राजस्थान में पाई जाने वाली देशी नस्ल की गायों को देख सकूॅ। मेरा स्वयं का इरादा है कि अपने घर देशी गायें ही पालूॅ। साथ ही वहॉ पर खाद बनाने के अलग–अलग प्रयोग – नेडेप खाद, वर्मी कम्पोस्ट आदि भी देखने थे। ताकि मैं स्वयं भी ये प्रयोग कर सकूॅ और अपने साथियों को भी प्राकृतिक खाद बनाने के तरीके बता सकूॅ। निस्सन्देह मेरे लिये तो यह प्रयोग बहुत ही अच्छा रहा।

यहॉ पर 3 दिन में हमने गोमूत्र और देशी जड़ी–बूटियों से औषधियॉ बनानी सीखीं। औषधियों में विशेष रोचक चीज थी – गोबर का साबुन। यह साबुन नहाने के लिए तो है ही, साथ ही विभिन्न प्रकार के चर्मरोगों के लिए भी असरकारी है। उसके बाद हमने उदयपुर में भी गोबर साबुन, गिलोय सत्व, गोमूत्र हरड़े चूर्ण आदि बनाए हैं।

जो स्वपथगामी साथी इसमें रूचि रखते है, वो यहॉ पर पंचगव्य (गोमूत्र, गोबर, गाय का दूध–दही–घी) से विभिन्न दवाइयॉ, गोबर से साबुन, अगरबत्ती, जड़ी–बुटियों से दवाइयॉ, खाद बनाने के प्रयोग, विभिन्न नस्लों की गायें व देशी खेती के प्रयोग देख सकते हैं। साथ ही यहॉ पर एक प्राकृतिक चिकित्सालय भी है, जहॉ हर्बल भाप स्नान, कटि–स्नान, मिट्टी की पट्टी आदि प्राक तिक उपचार को भी अनुभव कर सकते हैं। अपने घर या स्थानीय स्तर पर नए–नए प्रयोग करने के इच्छुक लोगों के लिए यह एक प्रेरणादायी जगह है, जहॉ वे अपनी क्षमताओं को बढ़ा सकते हैं।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :– पीयूष मिश्रा, राजस्थान गोसेवा संघ, इन्कम टैक्स कॉलोनी के सामने, टोंक रोड़, दुर्गापुरा, जयपुर (राजस्थान) फोन : 9414310772 / 2551310 / 2545954

मशीन से मुक्ति

"उपभोक्ता के निकटतम क्षेत्र में उपभोग की वस्तुओं का उत्पादन और प्रसंस्करण हो, तो परिवहन पर अंकुश लगेगा और पंगु–यंत्र निष्क्रिय हो जाएँगे।'' इस दिशा में मेरी भूमिका एक 'संशोधक' की है, मेरे कुछ प्रयोग निम्नलिखित हैं :–

1. चरखे के प्रचार में घूमते समय मैंने 150 से अधिक युवा–प्रौढ़ों को कताई सिखाई है। परन्तु कच्चे सूत को बुने कौन? दूर भेजकर बुनवाने का अर्थ है, पेरिस में कपड़े धुलवाना! कच्चे सूत बुनाई सीखना भी सिर–दर्द है। अतः मैंने समस्या–निवारण के लिए अध्ययन किया। एक नया यन्त्र बनाना खोजा। इस सरल यन्त्र पर अच्छा और जल्दी सूत दुपटा किया जा सकता है। यह मजबूत 'दुपटा–सूत' बिना माण्डी लगाए, तिगुनी तीव्र गति से बुना जा सकता है। स्वेटर बुनाई की तरह, वस्त्र बुनाई आसान हो जाएगी। दुपटा मेरी खोज नहीं, नया यन्त्र मेरी खोज है।

2. साबुन :– 'टाटा का कास्टिक और राजकोट का तेल, ग्रामोद्योग से नहीं है मेल!' यह मेरा विचार है। साबुन (डिटरजेण्ट) के परिवहन पर वस्त्रों के परिवहन से ज्यादा पेट्रोल–डीजल का व्यय होता है। अतः मैंने अरीठे से कपड़े धोना आरम्भ किया था, परन्तु पर्याप्त स्वच्छता नहीं आती। मैंने एक प्रयोग किया। केतकी के रेशे से रस्सी, थैले आदि बनते हैं, बुरादा बेकार जाता है। इस बुरादे (पल्प) से अच्छी धुलाई होती है।

3. 'बिन बिजली बिन कोल्हू–बैल, घर में निकालो शुद्ध तेल!' इस दिशा में मैंने सफलता पाई है। महीने में 30 मिनट कार्य कर महीने भर का तेल पा सकते हैं। प्रयोग सफल हुआ है। मध्यप्रदेश में सोयाबीन उत्पादन के कारण तेल का ग्रामोद्योग समाप्त हो गया, अतः इस दिशा में कार्य करना यहाँ जरूरी था।

इनके अतिरिक्त मैं बॉस का चरखा, देशी गुड़ बनाने के प्रयोग भी करना चाहता हूँ। जो साथी इन प्रयोगों के बारे में जानना चाहते हैं और खुद करके सीखना चाहते हैं, वे आमन्त्रित हैं।

– विनय कुमार जैन, ग्राम / पोस्ट – किन्दरई, सिवनी – 97(मध्यप्रदेश)

कचरा उत्पादन के 10 फायदे!

10. कचरे से निपटने के लिए नए–नए प्रोजेक्ट्स बना सकेंगे। इसके लिए विदेशी फण्ड ला सकेंगे और विश्वविद्यालयों में वेस्ट मैनेजमेंट के लिए नए–नए कोर्स शुरू किए जा सकेंगे।

9. चारों तरफ से कचरे से घिर जाने के बाद वातानुकूलित घर में बैठे रह सकेंगे और बाहर घूमने का झंझट ही खत्म हो जाएगा।

8. देश का जी.एन.पी. (राष्ट्रीय सकल उत्पादन) बढ़ेगा। कचरे को ठिकाने लगाने (waste management) के लिए देश का बजट बढ़ेगा और लोगों को रोजगार मिल सकेगा।

7. शेयर मार्केट में रिलायंस व अन्य प्लास्टिक बनाने वाली कम्पनियों के भाव बढ़ सकेंगे।

6. कचरे से पैदा होने वाली बीमारियों और समस्याओं पर बड़े–बड़े सेमिनार आयोजित कर सकेंगे, जिसमें कचरे को लेकर विश्वविद्यालयों के विशेषज्ञों को नित–नए भाषण देने के मौके मिल पाएँगे।

5. कचरे को लाने–ले जाने के लिए ट्रांसपोर्ट इंडस्ट्रीज को बहुत फायदा हो सकेगा।

4. पश्चिमी देशों की तर्ज पर हमारे देश में भी पर्यटन के लिए कचरे के आइलैण्ड (टापू) और हिमालय जैसी पर्वतमालाएँ बना सकेंगे।

3. पशुओं को चारा खिलाने का झंझट ही खत्म हो जाएगा।

2. कचरे के ढेरों से अविकसित और पिछड़े गॉवों को खत्म कर सकेंगे।

1. पृथ्वी को कचरामग्न करने के बाद अलग–अलग ग्रहों पर जाकर बस सकेंगे।

आमन्त्रण

स्वपथगामियों द्वारा शुरू की गई यह पत्रिका विभिन्न समूहों और व्यक्तियों के साथ संवाद स्थापित करने की कोशिश है, जिसके माध्यम से हम अनुभवों का आदान–प्रदान करते हैं। पत्रिका में जिन नए अवसरों का उल्लेख किया गया है और जिन लोगों के लेख प्रकाशित किए गए हैं, आप उनके बारे में विस्तृत जानकारी के लिए उनसे सीधा सम्पर्क कर सकते हैं। अपने स्तर पर उनके साथ मिलकर सीख सकते हैं। हम उन सभी लोगों को आमन्त्रित करते हैं, जो अपने जीवन में नए–नए प्रयोग कर रहे हैं और साथ मिलकर सीखने के मौके बना रहे हैं। हम उन लोगों को भी आमन्त्रित करते हैं, जो इस पत्रिका के सम्पादन में सहयोग करना चाहते हैं।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :–

रामावतार सिंह <ramawtarsingh@yahoo.co.in>
अनीश सिंह <anish.manzil@rediffmail.com>
c/o शिक्षान्तर, 21 फतेहपुरा, उदयपुर – 04 (राजस्थान)
फोन – 0294–2451303

आगामी कार्यक्रम

नई तालीम फिल्मोत्सव

शिक्षा को व्यापक अर्थ में समझने, संवाद करने और विभिन्न प्रकार की शिक्षा के प्रयोगों को देखने–समझने के लिए शिक्षान्तर (उदयपुर) और अभिव्यक्ति (नाशिक) ने मिलकर लगभग 20 फिल्मों का संकलन किया है। विभिन्न शहरों में आयोजित 'नई तालीम फिल्मोत्सव' में इन फिल्मों का प्रदर्शन किया जाएगा। इनमें डॉक्यूमेंट्री, व्यक्तिगत कहानियाँ, सीखने के नए प्रयोगों सहित फीचर फिल्में भी सम्मिलित है। अगर आप भी अपने शहर/ मोहल्ले/ गाँव में फिल्मोत्सव आयोजित करना चाहते हैं, तो सम्पर्क कर सकते हैं:– मनीष जैन <manish@swaraj.org>

शिक्षान्तर,
21 फतेहपुरा,
उदयपुर (राज)
फोन : 0294–2451303

पत्रिका का मुख्य पृष्ठ 14 वर्षीय सखी (नाशिक) ने डिजाइन किया है। सखी स्वयं एक स्वपथगामी है, जो स्कूल छोड़कर पिछले दो सालों से अलग-अलग जगहों और लोगों के साथ मिलकर सीख रही है और खुद अपने जीवन में नए-नए प्रयोग कर रही हैं।